# Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal

**(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)**

(Multidisciplinary, Monthly, Multilanguage)

*** Vol-3* *Issue-4* *April 2026***

**www.researchvidyapith.com** **ISSN (Online): 3048-7331**


# गढ़वाल की लोकपरंपरा में बाजूबंद की प्रासंगिकताः स्त्री मन की अभिव्यक्ति के विशेष संदर्भ में


***डॉ0 मीना नेगी***

*अिसस्टेंट प्रोफेसर हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, ब्रह्मखाल, उत्तरकाशी*



**Article Info:** *(Recieved- 02/02/2026, Accept- 20/03/2026, Published- 02/04/2026)*
**DOI-** 10.70650/rvimj.2026v3i4002



**सारांश–**

मध्यहिमालय प्राचीन काल से ही धार्मिक स्थानों के केन्द्र स्थल तथा सांस्कृतिक, ऐतिहासिक विरासत व अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण सर्वत्र पहचाना जाता है। हिमालय के पांच खण्डों में एक खण्ड केदारखण्ड है, जो आज का गढ़वाल मण्डल है। गढ़वाली समाज परम्परा, विष्वासों से प्राप्त मानवीय मूल्यों का पोशक और रक्षक रहा है। यहां का खान–पान, रहन–सहन, भौगोलिक परिवेश, बोली–भाषा और सामूहिक प्रवृत्तियाँ यहां के लोकजीवन को अभिव्यक्त करती है। गढ़वाल की परम्परायें, रीति–रिवाज, मान्यताएं और विश्वास इसे अलग एवं विशिष्ट पहचान दिलाते हैं, जो ऐतिहासिक, सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से समृद्ध है। यहाँ संस्कृति के विविध रूप लोक नाटको, लोक कथाओं, लोक गाथाओं व लोकगीतों के रूप में मानव हृदय से निकलकर मनोरंजन, शिक्षा व ज्ञान का मार्ग प्रषस्त करते हैं। इनमें 'लोकगीत' संस्कृति व संवाद का सबसे सषक्त माध्यम रहा है, जो हृदय की भावनाओं और विभिन्न राग वृत्तियों की अभिव्यक्ति करता है।



**शब्द–बीज–** बाजूबंद, लोकजीवन, लोकगीत, गायन–शैली, परंपरा आदि।


**परिचय–**

गढ़वाली लोकगीत उत्तराखण्ड के गढ़वाल अंचल की सांस्कृतिक आत्मा है। ये गीत पीढ़ियों से मौखिक परम्परा के माध्यम से संरक्षित होते आए हैं। दादी, नानी, गांव की महिलाएं, किसान, मजदूर सभी इन गीतों के वाहक है। "इन गीतों का उद्‌गम उतना ही पुराना है जितना पुराना स्वयं मनुष्य। ये गीत मनुष्य के साथ ही साथ जन्में अथवा यह कब बनें, किस ने इनकी रचना की? इसका भी कुछ पता नहीं है, इसका कारण केवल इतना ही नहीं कि उन गीतकारों का साहित्य मौखिक या अलिखित ही रहा है, बल्कि इसका मूल कारण यह भी है कि प्रत्येक गीतकार अपने को समूह में ढाल कर ही वहां कुछ कहता है और कहकर समूह की वाणी बन कर स्वयं भी समूह में मिल जाता है। इसलिए प्रत्येक गीत निर्माता अनाम है, अज्ञात है। प्रत्येक गीत के जन्म के विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि यह जन–मन की संस्कृति, अनुभूति–भावना और विचार की एक अमिट डोर है, जिसे एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को थमाती चली आई है। व्यष्टि–समष्टि का सामूहिक सत्य ही इन गीतों को चिरंजीवी बनाये रखता है।"[1]

आज भी ग्रामीण समाज, पर्वों त्योहारों, विवाह, प्रेम, विरह, प्रकृति, देवी–देवताओं और कृषि जैसे विषयों पर आधारित होकर अपने परिवेष का जीवंत उदाहरण लोकगीतों के माध्यम से प्रस्तुत करते है।

लोकगीत, लोकजीवन से जुड़े अनुभवों की रागात्मक अभिव्यक्ति का स्वरूप है। मन जब सुख–दुःख और रोमांच तथा आश्यर्च से प्रसन्न या क्षुब्ध होता है तब मानव हृदय में ये सुप्त रागात्मक 'स्थाई भाव' रस में परिणित होने के लिए 'गीत' का रूप धारण करते हैं। गीत में छन्द, तुक और लय का विधान होता है। गढ़वाल के अनेक लोकोत्सव और मेले–त्यौहार आपसी मेल–जोल, प्यार–प्रेम और एकता के प्रतीक माने जाते हैं जिनमें लोकगीत गायन लोक संस्कृति का प्राण तत्व है। अतः सभी संस्कारों, क्रियाओं, रीति–परिपाटियों के गीत भी अलग–अलग रूप के है। प्रमुखतः छोपती, तान्दी, थाड़्या, चौफला, झुमैलों, लामण, रासो आदि यहाँ के लोकजीवन से जुड़े सभी

नृत्यों में गाये जाने वाले गीत हैं।

विभिन्न विद्वानों ने लोकगीत को अपने शब्दों में परिभाषित किया है–

”लोकगीत‘ शब्द अंग्रेजी के ‘फॉक सांग‘ का पर्याय रूप माना गया है यह ‘फॉक सांग‘ जर्मनी के ‘वॉल्क‘ शब्द का मूल रूपान्तर है। जहां तक लोकगीत की परिभाषा का प्रष्न है, हम सामान्य रूप में यह कह सकते हैं कि, ”लोक में प्रचलित लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गये गीतों को लोकगीत कहा जा सकता है।”

श्री कुंज बिहारी दास के शब्दों में– ”लोकगीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मकता की अभिव्यक्ति है, जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर रहकर कम या अधिक रूप में आदिम अवस्था में निवास करते हैं”।

डॉ0 सदाषिव कृष्ण फड़के के शब्दों में– ”शास्त्रीय नियमों की विषेष परवाह न करके सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द की तरंग में जो छंदोबद्ध वाणी सहज उद्भूत करता है, वही लोकगीत है।”[2]

लोकगीत क्षेत्रियता का आवरण लिये हुये भिन्न–भिन्न नामों व तरीकों से गुनगुनाये जाते है जिन्हें गायन के तौर–तरीके के अनुसार विविध उपविधाओं में सामान्यतः निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है–

| | | | |
|---|---|---|---|
| 01– धार्मिक गीत | 07. झुमैंलों | 13. चौखुल्या | 19. छोड़ा |
| 02– ऐतिहासिक गीत | 08. खुदेड़ | 14. परिहास गीत | 20. चांचरी |
| 03– वार्तागीत | 09. चांचरी | 15. चेतना–प्रेरणा गीत | 21. रासों |
| 04– मंत्र–तंत्र | 10. चौफुला | 16. पर्यावरण गीत | 22. हारूल |
| 05. कुलाचार गीत | 11. बारामास | 17. विकास गीत | 23. विविध |
| 06–पंवाड़े | 12. बाजूबंद | 18. जागर गीत | |

उपर्युक्त समस्त लोकगीतों की रसधाराओं से गढ़वाल फलता–फूलता, मनोरंजन का भाव लिए विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों को स्व में समाकर अपनी संस्कृति को बढ़ाता रहा है। उत्तराखण्ड के गढ़वाल अंचल की लोक–संस्कृति, जन–जीवन व परंपराओं की आत्मा है। ये सभी प्रकार के गीत लोक जीवन की सजीव अभिव्यक्ति को दर्शाते हैं। प्रकृति की प्रधानता, संगीतात्मक सरलता, नारी केन्द्रित भाव, मौखिक परंपरा में पीढ़ियों से लोगों के बीच कंठस्थ रूप में सुरक्षित है।

मध्य हिमालय की लोक अभिव्यक्ति के विभिन्न गीतों की श्रृंखला में उपर्युक्त सभी उपविधाओं का विषेष महत्व है लोकगीत मानव मन के सभी भावों को बयान करते हुये आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहे हैं। उपर्युक्त गीतों की उपविधाओं में एक प्रमुख शैली बाजूबंद है– जो नारी विरह–वेदना और प्रवास की पीड़ा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करता है। गढ़वाल की महिलाओं की दषा एवं दिषा को हमेषा सुखों और दुःखों की अभिव्यक्ति के माध्यम से दर्षाती हुयी आगे बढ़ती है। बाजूबंद, विषेषकर महिलाओं के स्वाभाविक भावों की अभिव्यक्ति दैनिक क्रियाओं के साथ करता है। यह एक ऐसी विधा है जिसमें प्रेम–वेदना, क्षोभ आदि की मानवीय संवेदनाएँ युगल प्रवृत्ति, युगलोपासना, दाम्पत्य भावों की तीव्रता से लेकर वात्सल्य प्रेम की अभिव्यंजना में देखी व सुनी जा सकती है। इसे एकल एवं सामूहिक संवाद शैली में गाया जाता है।

डॉ0 गोविन्द चातक के अनुसार, ”प्रेम–गीतों की तीसरी कोटि में जंगू अथवा बाजूबंद आते हैं। कुमाऊँ में इन्हें ‘न्योली‘ नाम से पुकारा जाता है। गढ़वाल में दुवा (दोहा) शब्द का भी प्रयोग होता है। न्योली का रूप मूलतः दोहे का ही होता है। रवांई में इनके लिए षिलको (श्लोक) शब्द का भी प्रयोग होता है।”[3]

बाजूबंद गीतों को दुःख व उदासी तक सीमित न रखकर उसके क्षेत्र को विस्तार के साथ समझना ही पहाड़ी जनजीवन एवं वहाँ जीवन यापन करने वाली महिलाओं की भावनाओं को समझना है। बाजूबंद और न्योली पहाड़ की महिलाओं के अन्दर रचते–बसते वे गीत हैं, जो ग्रामीण समाज के जीवन को समग्रता में प्रस्तुत करते हैं। पहाड़ी जीवन हमेषा से ही जंगलों पर निर्भर रहा है। जिस कारण इन गीतों में विरह, रोमांस, रहस्य, गाली, झगड़ा, चुनौती, ममता का संदेष होने के साथ आराध्य देवताओं की स्तुति हैं। ”बाजूबंद गाने के लिए एकांत का होना या जंगल का होना बेहद जरूरी है। यह गीत वनों के एकान्त में घास–लकड़ी काटते तथा पषु चराते हुए गाया जाता है। ‘जंगू‘ शब्द में उसके जंगल में गाये जाने की भावना निहित होती है। बाजूबंद वैयक्तिक होता है।”[4]

”बाजूबंद गीतों के अन्तर्गत गढ़वाली गीतों की भी एक निजी–षैली है। जिसे ‘पट्टदार शैली‘ (तुक मिलाना) कहा जाता है। इस शैली के गीत प्रायः दो ही कड़ियों में गूंथे हुये होते हैं। इन दो पंक्तियों में ही एक पूरे भाव चित्र का चित्रांकन पाया जाता है। उसमें भी गीत की प्रथम पंक्ति प्रायः केवल तुक मिलाने का या ‘पट‘ मिलाने

के लिए प्रयुक्त की जाती है, और दूसरी सार्थक कही जा सकती है, परन्तु फिर भी पंक्ति से उसकी सार–युक्तता सिद्ध हो जाती है, और गीत की अन्य पंक्ति के भाव चित्र को भी उभार देती है। इन 'पट्टदार' गीतों के प्रचलन का श्रेय राह चलते बटोहियों, पथ के पथिकों एवं खेतों आदि में कठिन परिश्रम करते हुए धरती के पुत्रों को ही प्राप्त है। काम करते–करते या राह चलते–चलते इन रसिक हृदयों को जब भी जरा सा थकान का अनुभव होता है, बस तभी पट पर तुक मिला कर ये अपनी एवं अन्य कार्यग्रस्त श्रमिकों की थकान को दूर करते हैं। अतः इन गीतों का न कोई निष्चित रूप ही है और न निष्चित ध्वनि, न समय। बस मन की डगर के अनुसार इन गीतों की सृष्टि एवं ध्वनि का निर्माण होता रहता है।"[5]

मालचन्द रमोला अपनी रचना 'बाजूबन्द गीत' में लिखते हैं कि गढ़वाल के विषाल साहित्य सागर में जो अपना पृथक, स्वतन्त्र अस्तित्व लेकर एक पृथक दिशा प्रभावित हुई, वही लोक समाज द्वारा प्रणीत गीत–धारा बाजूबंद कहलाती है।[6]

## गढ़वाली बाजूबंद गीतों का सांस्कृतिक महत्व

गढ़वाली लोकगीतों की समृद्ध परम्परा में 'बाजूबंद गीत' विषेष स्थान रखते है। ये गीत केवल मनोरंजन या श्रृंगार की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि वे गढ़वाल की स्त्री के माध्यम से मधुर बोली भाषा में पहाड़ का पहाड़ जैसा जीवन जीने की आन्तरिक भावनाओं, निष्छल प्रेम संबंधों, सांस्कृतिक मूल्यों और सामाजिक चेतना को अभिव्यक्त करने का सषक्त माध्यम भी है।

गढ़वाली लोकगीत परंपरा में 'बाजूबंद' सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है इन गीतों के माध्यम से समाज के मूल्य, विष्वास, भाषा, कला, रीति–रिवाज और जीवनशैली को व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इन गीतों में मानसिक समृद्धि, नैतिकता की झलक उस समाज में संस्कृति के महत्व को दर्षाती है। बाजूबंद गीत गढ़वाल की अस्मिता की पहचान के साथ समूह को एक सूत्र में बांधने का भी प्रयास करते है। कहा जा सकता है कि गढ़वाल प्राकृतिक और सांस्कृतिक दोनो रूपों में समृद्ध है। वर्तमान टेक्नालॉजी युग में जहां मनोरंजन के हजारों साधन प्रत्येक के हाथों में दिखते हैं, जिससे जब चाहें मनोरंजन किया जा सकता है व दूसरों तक पहुंचा जा सकता है, अपनी याद (खुद) को क्षणभर में मिटाया जा सकता है। पौराणिक समय में जब यह साधन नहीं थे तो संवाद का सषक्त माध्यम कहें या यूं कहें यादों को मिटाने के तरीके के तौर पर घसियारियों ने बाजूबंद का सृजन किया व इसे अपने मन के भावों को लय व ताल के माध्यम से धारा प्रवाह संवाद हेतु प्रयोग किया। आज बाजूबंद की वह मौखिक शैली दुर्लभ होने के बाद भी अपने समाज की संस्कृति को स्वयं में समाये हुये है, जिसे सांस्कृतिक महत्व एवं लोक साहित्य के परिपेक्ष में निम्नवत् देखा जा सकता है।

01–नारी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति– 'बाजूबंद' गीतों में नारी के कोमल प्रेम तथा सौन्दर्य ने एकान्त अनुभूतियों में वाणी पाई है। यही कारण है कि इसमें स्वभावतः जीवन के उल्लास–खिन्नता, आषा–निराषा, उत्कण्ठा–उन्माद पीड़ा और आत्मगौरव जैसी अनेको गहरी संवेदनाएं व्यक्त होती हैं। 'बाजूबंद' गीत अतिसंवेदनषीलता की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है, जो दूर–दराज ब्याही एक पहाड़ी युवती एवं पारिवारिक जिम्मेदारियों को उठाती अकेली महिला के व्यथित मन के भावों का प्रस्फुटन है। पहाड़ी युवती अपनी वेदना को बाजूबंद गीत के माध्यम से इस प्रकार व्यक्त करती है–

*गिंजाला कू गाँज।*
*दी बचन बाजू लैदे, मुलकी रिवाज।*
*तारू छुमा बौ।।*
*भट्ट भुज्या खाजू।*
*खुशी क गीत लाया, बिपदा क बाजू।*
*तारू छुमा बौ।।*

बाजूबन्द गीत गाने के दौरान अक्सर घसियारियों को अपने मायके माता–पिता, सहेलियों, भाई–बहन घर–आँगन की याद आने लगती है–

*उड़ि जली खेष।*
*पंछि होंदू उड़ि जांदू, बाबा जी का देष*
*खुद लैगी बौ''।।*
*उजाला की रांकी।*
*मैं खुद लगदि, मयाली माँ की*

*कनै रण बौ।।*
*"पाणी भरी धारी।*
*माँ जी मा होली छोटी भुली प्यारी*
*खुद लैगी बौ"।।*

02–प्रेम और स्मृति का प्रतीक– 'बाजूबन्द' गीत प्रेम और स्मृति के प्रतीक माने जाते रहा हैं। "प्रेम की इन विभिन्न परिस्थितियों की छाया में बाजूबन्द रचे और गाये जाते हैं। जिस प्रकार किसी से किये जाने वाले वार्तालाप की पहले से कोई रूपरेखा निर्धारित नहीं होती, उसी प्रकार बाजूबंद में किसी परम्परा का बंधन नहीं होता"।[7]

प्रेम के परिप्रेक्ष में बाजूबंद की अलग–अलग कोटियाँ है– बाजूबन्द में दो स्त्री–पुरूषों का प्रेम संवाद होता है। यह दोनों की उपस्थिति के बिना संभव नहीं होता। प्रेम का एक रूप वो है जब युवाओं के बीच कौतूहलपूर्ण आकर्षण जागने लगता है–

*घुघता की घोली।*
*बांज काटदारी छोरी कै गौं की होली?*
*बाबला की कूची।*
*कै भी गौं की होली, तू क्या कंदू पूछी।।*
*आग की अंगेठी।*
*तेरी मायन सुवा जिकुड़ी लपेटी।।*
*हिंसर का गोंदा।*
*बिदेसू भंवर कभी अपड़ा नी होंदा।।*
*गुड़ खायो माख्योंन।*
*और खांदा गिचीन तू खांदी आंख्योंन।।*

इसी प्रकार प्रेम का दूसरा रूप विवाहिता स्त्री–पुरूष के परिपेक्ष में आता है, जो वैवाहिक सूत्र में बंधने के बाद उनके मिलाप, हृदय में प्रेम–विमोह के उत्सुकता की भावनाओं को मर्यादित रूप में प्रकट करता है। जब उनका प्रिय जीविकोपार्जन के लिए परदेश जाकर परिश्रम करता है, या फौज इत्यादि नौकरी हेतु सीमाओं पर जाता हैं, तब विरह की आग में जलती स्त्री के अन्तःकरण में अपने प्रियतम को स्मरण कर अनायास ही गीतों की धारा प्रवाहित हो जाती है–

*तौला पक्या भोज।*
*तुमारी खुदन स्वामी, आदा रोटी रोज।।*
*झंगोरा की बाल।*
*तेरू बाटू हेरी–हेरी, आँखी हवैन लाल।।*
*दाथुड़ा की धार।*
*कु भग्यान ली जालू, मेरू यू रैबार।*
*खुदेगी मैं बौ।।*

इस प्रकार अपने प्रेम को अकेले में याद (खुद) करती वह विरहिणी घसियारी विरान जंगल, पहाड़, पेड़–पौधो, नदी–झरनों, बादल व वर्षा गाड़–गदनों, बहती हवाओं को अपने मन की पीड़ा बताती है। वह खुदेड़ घसियारी अपने चित्त के भावों को प्रकृति के साथ साझा कर अतीत की सुखानुभुतियों की कल्पना में डूबकर कह उठती है–

*चरी जालू भेरू।*
*रात–दिन हवैगी, सुमिरण तेरू।*
*खुदेंदू मैं बौ।।*
*रोटी की टुकड़ी।*
*देखणू दुरलभ हवैगे सुवा, हँसदी मुखड़ी।।*

बाजूबन्द गीतों में भावनाऐं आत्मा से होती हुयी मुखवाणी को स्पर्ष करती है, जो सुनने वालों पर भी उतना

ही प्रभाव डालती हैं। ये गीत बहुत कर्णप्रिय, मर्मस्पर्शी होते हैं, अपने प्रियतम की स्मृति में डुबी घसियारी अपने हृदय में सदानीरा की धारा–सा स्थाई प्रेम का नित्य प्रवाह महसूस करती है और कह उठती है–

*लोण भरी दोण।*
*जनू मैंक मेरू स्वामी, तनु कैन होंण।।*
*बुणी जाली माणी।*
*जर निं मुंडारू मैं, क्य ह्वै होलू जाणी।।*

03–सामाजिक और पारिवारिक संबंधों की अभिव्यक्ति– 'बाजूबंद' गीतों में मायके और ससुराल, सास–बहू, भाई–बहन जैसे रिष्तों का भी वर्णन होना स्वाभाविक है। परिवार मनुष्य के साथ आजीवन जुड़ा होता है यही समाज का निर्माण करता है। व्यक्ति के अनुभवों का ताना–बाना पारिवारिक रिष्तों से ही बुना जाता है। मायका और ससुराल, सास और माँ की भावनाएं, बहन और ननद का अन्तर, ससुर और पिता की वाणी का फर्क जब समझ आता है, तब कोमल मन से एकान्त में मायके की 'खुद' (याद) कभी माँ को सम्बोधित करती, तो कभी प्यारी बहन के संग खेलना, हँसना याद करती है। जब उसका मन परदेष (ससुराल) में बहुत व्यथित हो जाता है तब वह कह उठती है–

*गाड़ बगी पाणी।*
*माँ क बाला माँ म, मैं रयूं बिराणी।*
*कै म लाण बौ।।*
*सबणा कू फेण।*
*खुद लैगी भारी माँजी, भैजी ल धौ लेण।*
*कनै रण बौ।।*

इन गीतों की अभिव्यक्ति करते–करते संवाद शैली प्रारम्भ हो जाती है, क्योंकि अन्य घसियारी बाजूबन्द गायन में जुड़ जाती है। इससे यह भी पता चलता है कि और भी घसियारियाँ घास लेने आई हुई हैं। जब वे आपस में बाजूबन्द गाती हैं, और संवादात्मक शैली में अपने दुःखों का जीवन के कष्टों का वर्णन कण्ठ खोलकर करती है, तब वे दोनों आत्मीयता से एक दूसरे का दुःख–सुख बांटती हैं–

*पाणी भरी बार।*
*हे मेरी गैल्याण मैं भी तेरी चाअर।*
*त्वैम लाँदू बौ।।*
*खल्याणी क दाँदा।*
*विदेशी बिराणा, निरूठा ह्वै जाँदा।*
*कैम लाण बौ।।*
*रोटी तोड़ी आदा।*
*द्वी दिन जिंदगी, निं सोचणू जादा।*
*हे पियारी बौ।।*
*घण्डूला की राली।*
*व्याखुनी बगत ह्वैगी, सासू देंदि गाली।*
*कनै रण बौ।।*

04–सांस्कृतिक धरोहर और परंपरा का संरक्षण– 'बाजूबन्द' गीतों के माध्यम से गढ़वाली समाज की सांस्कृतिक परम्पराओं को जानने में सहायता मिलती है। ये गीत अंचल विषेष के रीति–रिवाज, वेष–भूषा, रहन–सहन, बोली–भाषा के अनुसार रचे और गाये जाते हैं। संस्कृति विशेष का उत्थान–पतन, उतार–चढ़ावों का जितना सफल अंकन इन गीतों में रहता है, उतना अन्यत्र नहीं। किसी भी क्षेत्र की सांस्कृतिक धरोहर की जड़ें उसके अतीत में रहती हैं। किसी भी समाज की विकसित स्थिति का अनुमान वहाँ की महिलाओं को देखकर उनके शिक्षा के स्तर से लगाया जा सकता है।

परम्पराएं केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए मार्गदर्षक भी हैं। ये हमें हमारी जड़ों से जोड़ती हैं। परम्पराओं के संरक्षण से सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक एकजुटता, ज्ञान और अनुभव का हस्तांतरण परम्पराओं के माध्यम से एक पीढ़ी अपने अनुभव, मूल्य और जीवन शैली अगली पीढ़ी को सौंपती है। इन परम्पराओं के संरक्षण में अनेक–अनेक चुनौतियाँ आती रही हैं जैसे आधुनिकता और पाष्चात्य प्रभाव,

शहरीकरण, मौखिक परम्पराओं का लोप आदि। लिखित संरक्षण न होने के कारण 'बाजूबन्द' गीत समाप्त हो गए हैं। इनके संरक्षण के लिए षिक्षा में समावेश, दस्तावेजीकरण कर उनको सुरक्षित रखना, त्योहार और मेलों का आयोजन कर सारी परम्पराओं को पुर्नजीवित रखना जरूरी हैं। युवाओं की भागीदारी के लिए उन्हें लोक कलाओं से जोड़ने हेतु कार्यषालाएँ, प्रतियोगिताएँ और सांस्कृतिक षिविरों का आयोजन आवष्यक हैं। साथ ही डिजिटल माध्यमों का उपयोग, सोशल मिडिया, यूट्यूब और आर्काइव के जरिए परम्पराओं के प्रसार की जरूरत है। परम्पराओं का संरक्षण भविष्य के लिए सांस्कृतिक बीज बोना है। जब हम अपनी परम्पराओं को सहेजते हैं, तो हम अपनी पहचान मूल्यों और जड़ो को भी सुरक्षित रखते हैं। इसलिए आवष्यक है कि हर पीढ़ी इस जिम्मेदारी को समझे और निभाए, ताकि हमारी सांस्कृतिक विरासत हमेषा जीवित रह सके। बाजूंबद हमारे गढ़वाल की ऐसी धरोहर है जिसका अनुमान स्वयं सृजनकर्ता को भी नहीं रहा है, क्योंकि अपने संघर्षो को एक महिला (घसियारी) एकांत वन में काव्यात्मक ढंग से लय, छंद, ताल में गुनगुनाकर अपने रोजमर्रा की जिंदगी के अनुभवों को याद कर स्वःमूल्यांकन करती है जिससे उसके हृदय के तार वीणा के भांति झंकृत होकर नया 'राग' छेड़ते हैं जिससे काव्य का सुन्दर संवाद जन्म लेता है। साथ ही जन्म होता है, एक नवीन शैली का जो संवेदना के कारण दो अनभिज्ञ लोगो में संवाद की स्थिति उत्पन्न कर देती है। तब समाज पढ़ा–लिखा नही था किंतु कतिपय विद्वानों के द्वारा इसको लिखित रूप में खोजकर रखा गया है। ऐसी दुर्लभ धरोहर या विरासत का संरक्षण करना समय–समय पर अनिवार्य हो जाता है। उसी से हमारी पीढ़ियों तक हमारी विरासत को भाषा के रूप में पहुंचाया जा सकता है।

05–लोक संगीत की मधुरता और शैलीः– 'बाजूबन्द' गीत सामूहिक एवं निजी अनुभूतियों के हल्के और गहरे रागों के भावों के उद्गारों में सभी जनपदों में ही नहीं बल्कि हर क्षेत्र विषेष में अपने लोकसंगीत की मधुरता लिए हुए है। भारत में भाषा और पानी के लिए प्रसिद्ध कहावत है– "कोस–कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी" अर्थात् भाषा और पानी यहाँ की क्षेत्रीय विविधताओं को दर्षाती है। "गढ़वाल में जितनी लोकप्रियता बाजूबन्द गीतों की है, उतनी अन्य गीत शैलियों की नहीं हुई। ये गीत सदैव गढ़वाली समाज में जन–जन के कंठहार बने रहे हैं। पुराने गीतों का माधुर्य भले ही फीका पड़ जाए, ये सदैव नये–नवीन बने रहते हैं। यही गढ़वाल के आदि गीत हैं जिनमें जन–जन के शुद्ध सच्चे, मौलिक उद्गार सुरक्षित हैं।"[8]

"ये पौराणिक लोक शैली के होते हुए भी नित्य, नवीन व सरस है। इनमें लोकप्रिय संगीत है, जिसकी भौण (लय) अन्य सबसे भिन्न है। इनके निराले ढंग का मादक–रस हृदय में अभूतपूर्व आनंद की सृष्टि करते हैं। बाजूबंद पद का प्रत्येक पद या दोहा अपने में परिपूर्ण होता है। इनमें छन्द भेद है, रस भेद है, और वह नीति के लक्षण रूप में प्रयोग होते हैं।" उच्च कोटि की लयात्मकता के कारण अंलकारिकता को प्राथमिकता दी जाती है और इसे गीति तत्व के साथ गाया जाता है।

**निष्कर्ष–**

गढ़वाली लोकगीतों में 'बाजूबन्द' जन मानस की चेतना के वेदना के ही गीत नहीं, बल्कि प्रेम, लगाव, संवेदना और सांस्कृतिक जीवन का जीवंत प्रतीक है। इन गीतों के माध्यम से नारी (घसियारियों) की आत्मा बोलती है। वह प्रकृति से नैकट्य के कारण उसकी चिर सखी होती है। उसके प्रति उसकी प्रतिबद्धता के साथ प्रेम भाव भी समाहित होता है वह वनों में छोटे पौधो एवं पेड़ो पर हथियार नहीं चलाती। बाजूबंद गीतों में स्त्री की भावनाओं की गहराई, उसकी प्रतीक्षा, उसका प्रेम और सामाजिक सम्बन्धों का सहज चित्रण मिलता है। इन गीतों का महत्व केवल व्यक्तिगत भावनाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि वे पूरे समाज की सामूहिक संस्कृति और जीवन दृष्टि को भी प्रकट करते हैं। गढ़वाली समाज की परम्पराओं, आभूषणों, लोक संस्कारों और नारी के भावात्मक संसार को समझने के लिए बाजूबंद गीत अत्यंत महत्वपूर्ण स्त्रोत है। आज जब लोक संस्कृति पर आधुनिकता का प्रभाव पड़ रहा है, ऐसे समय में बाजूबंद गीत हमको हमारी जड़ो से जोड़ते हैं और यह स्मरण कराते है कि लोकगीत ही समाज की आत्मा है। अतः इनका संरक्षण, संकलन और प्रसार न केवल साहित्यिक दृष्टि से अपितु सांस्कृतिक पहचान की रक्षा हेतु भी आवष्यक है।

## Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding

the subject, findings, or publication of this article.

**संदर्भ सूची**


1. डॉ0 जनार्दन प्रसाद काला, गढ़वाली भाषा और उसका लोक साहित्य पृ0 179 प्रकाषन समय साक्ष्य देहरादून।
2. डॉ0 शोभा रावत लोकसाहित्य पृ0सं0 55 अंकित प्रकाषन ।
3. डॉ0 गोविंद चातक भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय तक्षषिला प्रकाषन– 1996 पृ0सं0 182
4. डॉ0 गोविन्द चातक भारतीय लोक संस्कृति का सन्दर्भ मध्य हिमालय तक्षषिला प्रकाषन– 1996 पृ0सं0 183
5. डॉ0 जनार्दन प्रसाद काला गढ़वाली भाषा और उसका लोक–साहित्य पृ0सं0– 287–288
6. डॉ0 जनार्दन प्रसाद काला गढ़वाली भाषा और उसका लोक–साहित्य पृ0सं0– 289
7. डॉ0 गोविंद चातक– भारतीय लोक–संस्कृति का संदर्भः मध्य हिमालय तक्षषिला प्रकाषन पृ0 183
8. डॉ0 जनार्दन प्रसाद काला गढ़वाली भाषा और उसका लोक–साहित्य पृ0सं0– 289


## Cite this Article-

***'डॉ0 मीना नेगी', "गढ़वाल की लोकपरंपरा में बाजूबंद की प्रासंगिकताः स्त्री मन की अभिव्यक्ति के विशेष संदर्भ में",*** Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal, ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:3, Issue:4, April 2026.

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."